संत मत के आंतरिक अभ्यास

संत मत के मुख्यतः तीन आंतरिक अभ्यास हैः- भजन, सुमिरन तथा ध्यान जिन्हें सुफियों की भाषा में जिक्र, फिक्र और राबता कहते हैं। यह अन्तर्मुखी अभ्यास है जिनसे सूरत अन्तर में खिचती है तथा मन संतुलित होता हैं सुमिरन अपने इष्ट (गुरू) को पुकारना, उसे याद करता है। ध्यान अपने इष्ट के स्वरूप में अन्तदृष्टि जमाना है और भजन से अभिप्रायः सूरत शब्द से है जो कि आत्मा के आकर्षण की हिलोर है। ये तीनों अभ्यास महत्वपूर्ण है और एक दूसरे के पूरक भी। प्रायः सुमिरन और ध्यान से प्रेमांग जल्दी जागृत होता है और खिंचाव तेजी से होता है। इसलिए यह जज्ब के तरीकों में बहुत सहायक होती है। भजन व अभ्यास में एकाग्रता के साथ स्थान विशेष पर ठहराव भी होता जाता है जिसे मन को संतुलन में लाने की ताकत प्राप्त होती है। यह अभ्यास सुलूक के तरीके में बहुत काम करता है। ये तीनों अभ्यास बहुत महत्वपूर्ण और संतमत में आवश्यक है।

संत मत के प्रमुख अंग

संत मत के प्रमुख अंग तीन हैं - सत-नाम, सत-संग तथा सद्गुरू

संत मत का प्रमुख आधार सत-गुरू है। सत-गुरू वह महान आत्मा है जो निरंतर ईश्वर में लय रहता है और जिसकी अभेद दृष्टि है। सद्गुरू वह महान आत्मा है जो ईश्वर का साक्षात्कार कर पूर्ण आध्यात्मिकता प्राप्त कर चुका है। ऐसी महान आत्माओं के द्वारा व्यावहारिक रूप से प्रदर्शित आत्मा की उन्नति के सिद्धान्तों तथा साधनों का सामूहिक रूप ही सतसंग है।

सत-गुरू ईश्वर का ही रूप है जो सर्वसाधारण का उद्धार करने मनुष्य रूप धारण कर आता है। ऐसे महापुरूष के समीप रहकर, उनका व्यवहार देखकर तथा उनके आदेशानुसार जीवन बनाकर साधक भी गुरू रूप हो जाता है।

संतमत में सत-गुरू के सतसंग का विशेष महत्व है। साधक सतगुरू के चरणों में स्वयं को समर्पित कर निरंतर उनके आदेशानुसार जीवन व्यतीत करता है। सदैव ईश्वर में लय, अभेद दृष्टियुक्त, सतगुरू, साधक को ईश्वर के आदेशों को समझने में मदद करते हैं जिसके अनुसार जीवन व्यतीत कर साधक अपना उद्धार कर सकता है।

संतमत में सतगुरू शिष्य की पूर्णता की परीक्षा कर लेने के बाद ही शिष्य को दीक्षा देते हैं। जब शिष्य अपना सर्वस्व गुरू के चरणों में अर्पण कर देता है तभी वह दीक्षा का अधिकारी बनता है। गुरू में पूर्ण समर्पण तथा अनन्य विश्वास होने पर सतगुरू अपने शिष्य की निरंतर रक्षा करते हैं, संभाल करते हैं। गुरू आश्रय अनुसार चलने से साधक अहंकार तथा मोह रहित हो जाता है, तथा उसका मन शुद्ध हो जाता है तथा सतगुरू के लिए उसकी श्रद्धा बढ़ती जाती है।

सत-गुरू जब दीक्षा देते है तो शिष्य को उसकी रूचि के अनुसार नाम दे देते है। जिस नाम से, चाहे वह वर्णात्मक हो या धुनात्मक, ईश्वर से एकता हो जाए, वही सत-नाम है।